हाथ-अुद्योग और यंत्र-अुद्योगोंका मेल–२

रजि० नं० बी ४४४८

हरिजनसेवक

दो आना

(स्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १५ सम्पादक : किशोरलाल मशरूवाला सह-सम्पादक : मगनभाअी देसाअी अंक ४

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद ९

अहमदाबाद, शनिवार, ता० २४ मार्च, १९५१

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

गांधीजीके साहित्यका कापीराअिट

महात्मा गांधीके अन्तिम वसीयतनामेकी व्यवस्थाके मुताबिक, जो अहमदाबादके जिला-न्यायाधीशकी अदालत द्वारा १९४९ की 'प्रोबेट' (वसीयतनामेकी सरकारी तसदीक) की कार्रवाअी नं० ६९में बाकायदा मंजूर किया गया था, महात्माजीके साहित्यका — जिसमें अुनकी पुस्तकें, लेख, अुद्धरण, पत्र, पत्रोत्तर वगैरा शामिल हैं — कापीराअिट सारी दुनियामें केवल नवजीवन ट्रस्टको ही संपूर्ण रूपसे सौंपा गया है। अिस कापीराअिटमें अनुवाद, ब्राडकास्ट, वगैराके अधिकार भी शामिल हैं।

ट्रस्टका ध्यान अिस बातकी तरफ खींचा गया है कि कुछ व्यक्ति और प्रकाशक पहलेसे ट्रस्टकी अिजाजत लिये बिना गांधीजीकी पुस्तकों, लेखों या दूसरोंको लिखे गये अुनके पत्रों या अुत्तरोंको पूर्ण रूपमें या अंशतः अथवा अुनका सार या पुनर्व्यवस्थित रूप या अनुवाद छापते, प्रकाशित करते, बेचते या बांटते हैं। यह ट्रस्टके अधिकारोंका भारी अुल्लंघन है और अेक अैसा गुनाह है, जिसके खिलाफ अदालतमें कानूनी कार्रवाअी की जा सकती है।

ट्रस्टकी यह हार्दिक अिच्छा है कि गांधीजीके साहित्यका ज्यादासे ज्यादा प्रचार और प्रसार हो। आम तौर पर आसान शर्तों पर, अक्सर नाम मात्रकी शर्तों पर, प्रकाशकोंको अिजाजत देनेकी ट्रस्टकी नीति रही है। लेकिन अगर ट्रस्ट जाग्रत रहकर अिस साहित्यके प्रामाणिक प्रकाशनका ध्यान न रखे और हर किसीको अपनी मरजीके मुताबिक गांधीजीके नामका दुरुपयोग करने दे, तो वह अपने कर्तव्यसे च्युत हुआ माना जायगा।

अिसलिअे यह वांछनीय है कि गांधीजीके लेखों वगैराके प्रकाशनकी अिच्छा रखनेवाले सब लोग पहलेसे ट्रस्टकी लेखी अिजाजत ले लें, ताकि भविष्यमें अुन्हें किसी कठिनाअीका सामना न करना पड़े।

जीन लोगोंको ट्रस्टके कापीराअिटके अुल्लंघनके मामलोंके बारेमें पता चले अुनसे ट्रस्टकी विनती है कि वे अैसे मामलोंकी तुरन्त अुसे सूचना करें।

जीवणजी देसाअी
व्यवस्थापक ट्रस्टी

नोट : — मालूम होता है कुछ प्रकाशक जानबूझकर गांधीजीके वसीयतनामेकी अुपेक्षा करनेकी कोशिश करते हैं। मैंने अिनमें से कुछको यह दलील करते हुअे सुना है कि गांधीजीकी पुस्तकें, लेख वगैरा पर किसी खास संस्थाका अधिकार नहीं हो सकता। गांधीजी सारी दुनियाके थे और अुनके साहित्यको प्रकाशित करना चाहनेवाला कोअी भी व्यक्ति अैसा कर सकता है। यह गलत दलील है। बहुत ठोस और बलवान कारणोंसे, गांधीजीने अपने लेखों वगैराको काट-छांटसे बचानेके लिअे निश्चित और सावधानीपूर्ण कदम अुठाये थे और वसीयतनामे द्वारा अपना कापीराअिट नवजीवनको सौंपा था। जाहिर है कि अुनका यह काम अुनके नजदीकके सब लोगोंको पसन्द नहीं आया है, जो अपने या जगतके लाभके लिअे या दोनोंके लाभके लिअे अुनके साहित्यका प्रचार करनेको बहुत चिन्तित हैं। लेकिन अुनकी नाराजी या चिन्ता अुन्हें 'अिच्छित अधिकार' तो नहीं दे सकती। अगर वे गांधीजी और अुनके विचारोंके प्रति भक्ति और श्रद्धा होनेके कारण ही — जैसा कि वे कहते हैं — अुनका साहित्य प्रकाशित करना चाहते हैं, तो गांधीजीने अपने वसीयतनामेमें जो अिच्छा प्रगट की है, अुसका अुन्हें आदर करना चाहिये और अैसा करनेके लिअे कानून द्वारा बताअी हुअी विधियां पूरी करनी चाहियें — यानी नवजीवन ट्रस्टकी अिजाजत लेनी चाहिये।

(अंग्रेजीसे)

कि० घ० म०

स्वरक्षाका अधिकार

अेक सज्जन लिखते हैं :

"राजस्थान प्रान्तके सिरोही जिलेके जागीरी गांवोंमें किसानोंके कुओं पर अिस समय गेहूं व जौकी फ़सल खड़ी है। अुसमें से हरे गेहूं और जौ काटकर जागीरदार अपने घोड़ोंको खिलाते हैं, जिससे सैकड़ों मन अनाज बरबाद होता है। अिसके लिअे किसानोंने अधिकारियोंसे शिकायत की, परन्तु अधिकारियोंने कोअी ध्यान नहीं दिया। हो सके तो अिसे आप 'हरिजन', 'हरिजनसेवक' आदिमें प्रकाशित करावें।"

मान लीजिये प्रकाशित किया! लेकिन प्रकाशित करने भरसे क्या हासिल हो सकता है? 'हरिजन' पत्र कोअी तिलस्म तो नहीं, जिनमें प्रकाशित कर देनेसे जागीरदारके घोड़े भाग जायंगे! अगर यह बात सच है, तो किसानोंके लिअे शर्मकी बात है। हरअेक आदमीका हक और फर्ज भी है कि वह अपने बालबच्चों और अपने घर-जायदादकी रक्षा हर तरहसे करे। किसानोंको अपने खेत और फसलकी रक्षाके लिअे, चाहे जागीरदारके घोड़े हों या राजप्रमुखके, अुन्हें मारने-हकालनेका हक है। मान लिया जाय कि पुलिस अुनकी मदद नहीं करेगी, बल्कि जागीरदारके दबावमें आकर अुन्हें ही तंग करेगी; और न मंत्री-मंडल या अदालतें ही अुन्हें सहायता देंगी। अपने सत्वकी रक्षा करते करते मर-मिटना बेहतर है। किसानोंको आपसमें मिलकर अैसे जुल्मका पूरा सामना करना चाहिये। वैसा करना अुनका प्राकृतिक और कानूनी अधिकार है।

जागीरदारों और अधिकारियोंको भी अिसमें शर्म मालूम होना चाहिये। अिस तरह वे जनताका शोषण करेंगे या करने देंगे, तो अिस देशका भी वही हाल होनेवाला है, जो रशियाकी जारशाही और चीनकी चांगशाहीका हुआ।

वर्धा, १२-३-'५१

कि० घ० मशरूवाला

www.vinoba.in

हिमालयके सबक — ३

हमने टेहरी गढ़वालका तय किया

तीन वर्ष पहले मैं अुत्तरकाशी और प्रतापनगरकी यात्रा पर गअी थी, तभीसे टेहरी गढ़वालके बारेमें विचार कर रही थी। अिस बार हम नीलकण्ठ तो अिसलिअे गये थे कि बरसात शरू होनेसे पहले बहुत दूर जा नहीं सकते थे। यह भी खयाल था कि यह स्थान पशुलोकके बहुत ही पास है, अिसलिअे वहां आना-जाना आसान होगा। लेकिन सच बात तो यह थी कि अिस ६ मीलकी दूरीका बहुत बड़ा भाग तो सीधी चढ़ाअीवाला है और घने, गरम और बुरी तरह काटनेवाले मच्छरोंसे भरे जंगलमें से होकर जाता है। अिस कारण यह स्थान आने-जानेकी दृष्टिसे बड़ा कठिन मालूम हुआ। अन्तमें हमने चम्बाखालको आजमा देखनेकी कोशिश की, जो नरेन्द्रनगर और टेहरीके बीचके मोटर-मार्गके सबसे अूंचे भाग पर बसा हुआ है। वह स्थान अनुकूल न मालूम हो, तो बादमें कौड़िया जानेका हमारा विचार था। स्थानीय अधिकारियोंने मेहरबानीसे हमें दोनों स्थानोंके लिअे अिजाजत दे दी थी। अिसलिअे ११ अगस्तकी रात स्वर्गाश्रममें बिताकर दूसरे दिन सुबह-सुबह लक्ष्मणझूलासे मोटर-ट्रकमें रवाना होनेका हमने निश्चय किया।

फिर प्रवासमें

तकदीरसे हम जब नीलकण्ठसे नीचे अुतरे, तब बरसात बन्द हो गयी थी। लेकिन बादमें तो मूसलधार पानी बरसने लगा और दूसरे दिन सुबह तक बरसता ही रहा। लेकिन पानी गिरे या न गिरे, हमें तो आगे बढ़ना ही था। अभी मोटर स्टेशन कमसे कम डेढ़ मील दूर था और अपने आपको व सामानको गीला होनेसे बचानेकी सारी कोशिशोंके बावजूद ट्रक तक पहुंचते-पहुंचते सब कुछ अच्छी तरह भीग गया था। अेक क्षणकी भी देर किये बिना हम अपने सामानके साथ ट्रकमें बैठ गये और नरेन्द्रनगर जानेवाले सीधी चढ़ाअीके घुमावदार रास्ते पर आगे बढ़े। रास्तेमें यह अफवाह सुननेमें आअी कि नरेन्द्रनगरके आगेका रास्ता टूट गया है और अुसकी मरम्मत हो रही है। कलेक्टरके बंगले पर हमें मालूम हुआ कि यह अफवाह बिलकुल सच थी और कमसे कम अगले २४ घण्टे तक सड़ककी मरम्मत पूरी नहीं होगी। मुझे काकोटके रेस्ट हाअुसका स्मरण आया, जिसे मैंने तीन साल पहले अुस रास्ते पर मोटरसे सफर करते समय देखा था। अधिकारियोंने अिस जगहके लिअे भी मेहरबानीसे हमें अिजाजत दे दी। अेक कोयलेका थैला और कुछ शाक-भाजी खरीदकर हम अुस तरफ आगे बढ़े। बारिश धीमी पड़ी और हम थोड़े आशा-वादी बने। सुबहसे ही हमें कुछ खानेको नहीं मिला था और अब दिनके दो बजनेको आ गये थे। हमने तय किया कि रेस्ट हाअुस पहुंचकर हम भोजन नहीं बनायेंगे, बल्कि गरम पेय लेंगे और व्यवस्थित हो जानेके बाद शामको अच्छा भोजन करेंगे।

काकोट रेस्ट हाअुस

अब हमें रेस्ट हाअुस दिखने लगा था। पहाड़के पास अूंचे रास्तेसे लगभग ५० गज नीचे वह बना हुआ था। अुसके पास ही दो-तीन छोटी दुकानें थीं। यह सब हमें आशाजनक लगा। पहुंचनेके बाद पहला काम चौकीदारकी खोज करना था। लेकिन अुसका कहीं पता नहीं चला। बारिश फिर शुरू हो रही थी, अिसलिअे हम जल्दीसे सामानके साथ पीछेके बरामदेमें चले गये। हमने कांचकी खिड़कियोंमें से अन्दर झांककर देखा। पहले कमरेमें, जो खाली था, छतके बिचले भागसे पानी टपक रहा था और सारा फर्श गीला हो गया था। दूसरे कमरेमें पुरानी कुर्सियोंका या अुनके ढांचोंका ढेर पड़ा था। सारी कुर्सियोंकी बैठक टूट चुकी थी। अेक टूटा-फूटा लोहेका पलंग भी था, जिसकी तारोंकी जाली टूटकर नीचे झूल रही थी। यह सब आशाप्रद नहीं था। लेकिन हमें तो अिसीका अच्छेसे अच्छा अुपयोग कर लेना था। ज्यों ही चौकीदारने आकर मकान खोला, हमने सारा पुराना फरनीचर निकाल कर सामनेके बरामदेमें रखा और अपना गीला सामान कमरेमें फैला दिया। लेकिन भोजन बनानेके लिअे आग कैसे जलाअी जाय? चूल्हा बिलकुल टूट चुका था और हमारे पास केवल कोयला ही था। सूखी लकड़ीका मिलना कठिन था। हम अिस परेशानीमें पड़े हुअे थे कि बिशनने टीनका अेक पुराना टुकड़ा खोज निकाला। अिसमें अुसने छेद करके अुसे चूल्हे पर जमा दिया। वहां अेक स्टव्ह भी था! थोड़ी ही देरमें कोयले जल अुठे और हममें अुत्साहका संचार हुआ। सौभाग्यसे हवा काफी अच्छी थी। हमारी अधिकतर चीजें भीगी हुअी थीं और सीमेन्टकी फर्शके सिवा बिस्तरके रूपमें फैलानेके लिअे हमारे पास कुछ भी नहीं था। दूसरे दिन सुबह सूरज निकला और हमने प्रसन्नतासे अपने कपड़े और कम्बल वगैरा सुखाये। लेकिन टूटे हुअे रास्तेने हमें दो दिन और दो रात वहां रोके रखा, क्योंकि पहाड़की ढाल परसे पत्थर वगैरा धुलकर रास्ते पर गिरते रहते थे, और रास्ता साफ होते ही तुरन्त फिर अुनसे भर जाता था।

आशाके आधार पर

हम यह सोचकर मनको मनाते रहे कि अेक बार चम्बाखाल पहुंचे कि हमें अच्छा रेस्ट हाअुस मिलेगा। आशा कैसी अद्भुत वस्तु है! अन्तमें वह पूरी हो या न हो, लेकिन मनुष्यकी सारी मुसीबतोंसे पार होनेमें वह जरूर मदद करती है। जब आशा अुसे धोखा देती है, तभी केवल अुसकी हिम्मत टूट जाती है। अिसलिअे हमने भी अपनी आशाके बल पर अपनी छोटी मुसीबतोंमें धैर्य रखा। खतरनाक मोटरका सफर तय करके जब हम चम्बाखाल पहुंचे तो हमें पता चला कि वहां कोअी रेस्ट हाअुस नहीं है जहां हम जा सकें। लेकिन अिस शोधसे अिस हकीकतमें कोअी फर्क नहीं पड़ सका कि पिछले दिनोंमें हम आशाके बल पर ही टिके रहे। बेशक, आशा अपने अुत्कृष्ट रूपमें श्रद्धा बन जाती है — अैसी अटल श्रद्धा कि जब तक हम यथाशक्ति प्रयत्न करते हैं, तब तक चाहे जो हो, अन्तमें सब अच्छा ही होगा; क्योंकि यह अीश्वरकी अिच्छा है।

चम्बाखालमें तकलीफ

हम अब चम्बाखाल पहुंच गये थे, जो ५३०० फुटकी अूंचाअी पर बसा हुआ है। वहां घाटीसे होकर आनेवाली ठण्डी, गीली हवा बह रही थी। चम्बाखालमें रेस्ट हाअुसके न होनेका सादा कारण यही था कि वह जंगल खातेको भाड़े पर दे दिया गया था। लेकिन कलेक्टरको अिसकी सूचना नहीं दी गअी थी, अिसलिअे अुन्होंने सब कुछ ठीक मानकर हमें वहां रहनेकी अिजाजत दे दी थी। चम्बाखाल कस्बा नहीं है, गांव भी नहीं है। वहां अेक डाकखाना, अेक चायकी दुकान, अेक स्कूल और कुछ बिखरे हुअे घर हैं। हमारे पहुंचते ही वहांके लोग हमारे आसपास अिकट्ठे हो गये। कअी तरहके सुझाव दिये गये और ठहरनेके स्थानकी खोज भी काफी की गअी। शाम होनेको आयी थी; लेकिन रातमें ठहरनेके लिअे कोअी स्थान नहीं मिल रहा था। आखिरकार किसीने अेक छोटे नये मकानकी चाबी हमें दी। अुसमें अेक रहने लायक कमरा और शामको भोजन बनानेके लिअे अेक चूल्हा हमें मिला। लेकिन कमरा अितना बड़ा नहीं था कि अुसमें सारी पार्टी सामानके साथ रह सके। अिसलिअे मैंने कहा कि मैं ट्रककी अगली सीट पर सो रहूंगी। भवानीसिंह और बिशन दोनों ट्रकके पिछले हिस्सेमें सोये। रातको काफी ठण्ड और हवा थी। अिसलिअे सवेरे हम सब थोड़े गीले-से हो गये। और सवेरा होते ही नअी मुसीबत आअी। पाखाने तो वहां थे ही नहीं; कहीं कोअी पेड़ या झाड़ी भी नहीं थी, जिनकी आड़में बैठकर कोअी पाखाना जा सके। बरसते पानीमें कीचड़ कूचकर टेहरीकी सड़क पर लगभग अेक मील नीचे मैं गअी, तब कहीं मुझे पाखाना जाने लायक थोड़ी जगह मिली।

(अंग्रेजीसे)

मीरा

www.vinoba.in

कुछ चिन्ताजनक बुराअियां

हर साल सरकारी कामकाजका साल पूरा होनेको आता है और नये सालके बजट वगैरा जाहिर होते ही जनता पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कर-भार बढ़नेके समाचार मिलते हैं। कुछ करोंका भार तो अैसा होता है कि अगर जनताके अलग-अलग वर्गोंका सक्रिय सहयोग मिले, तो गरीब जनता करकी अिस वृद्धिसे बच सकती है।

अिस विषयमें रेलवेसे सम्बन्ध रखनेवाली कुछ बुराअियां मुझे याद आती हैं।

(१) रेलमें सफर करनेवाले लोगोंमें अेक अैसा वर्ग होता है, जो टिकिट खरीदनेकी शक्ति होते हुअे भी अपनी जान-पहचानके कारण बिना टिकिट सफर करता है। चलती रेलोंमें टिकिट चेकर आते हैं, तब कुछ सफेदपोश लोग अपनेको किसी रेलवे कर्मचारीका सम्बन्धी बताकर बचनेका प्रयत्न करते हैं और अिसमें वे बहुत हद तक सफल भी होते हैं। फल यह होता है कि रेलवेकी अुचित आयमें घाटा होता है। रेलवेके टिकिट चेकरोंको यह बात चलने नहीं देनी चाहिये।

(२) बड़े-बड़े शहरोंमें आसपासके गांवोंसे रेल द्वारा काफी शाकभाजी, दूध, फल वगैरा आते हैं। अिस तरहके व्यापारी रोजाना सफर करनेवाले होते हैं और अपने साथका माल अलग-अलग तरीकेसे छिपाकर रेलवेको अुचित भाड़ा नहीं देते। किसी न किसी तरह बड़े स्टेशनों पर अुसे अुतारकर वे नौ दो ग्यारह हो जाते हैं। अेक दूधके हंडेवालेने मुझे बताया था कि अुसके साथका दूसरा दूधवाला बिना पासके आया है। वह अहमदाबाद स्टेशनके पासवाले मणिनगर स्टेशन पर अेक लोटा दूध . . . को देगा कि वहांका वह रेलवे कर्मचारी बिना टिकिट अुसे दूधके साथ जाने देनेकी जिम्मेदारी अपने सिर ले लेगा।

अेक बार सूरत स्टेशनसे कअी तरहकी शाकभाजी और फलोंकी टोकरियां अलग-अलग जगहों पर रखकर अेक व्यापारीने यात्रा शुरू की। दादर स्टेशन पर अिस शाकभाजीमें से थोड़ा हिस्सा अेक रेलवे कर्मचारीको दिया। बी० बी० अेण्ड सी० आअी० के सेंट्रल स्टेशन पर कोअी पूछ ही नहीं सकता, अिसलिअे बिना भाड़ा दिये बहुत बड़ी मात्रामें अुसका माल सूरतसे बम्बअी जा सका। अिस तरहकी घटनायें रोज-रोज होती हैं। लेकिन अिससे भी ज्यादा चौंकानेवाले समाचार मुझे अेक बार सफरमें आपसमें बातें करते हुअे दो मुसाफिरोंसे मिले। भारी वजनका माल बिना भाड़ा चुकाये किसी जगह भेजनेके लिअे रेलके आर० अेम० अेस० (डाक) के डिब्बेका भी अुपयोग किया जा सकता है। यह सुनी हुअी बात है। लेकिन अगर यह सच हो, तो रेलवे-विभागको समझ लेना चाहिये कि अुसके घरके लोग ही अुसके साथ विश्वासघात करने लगे हैं।

बम्बअी जैसे बड़े शहरोंमें बिना पासके लोकल गाड़ियोंमें प्रवास करनेकी बुराअी कितनी फैली हुअी है, यह बम्बअीमें न रहनेवाले लोग नहीं बता सकते। अेक पासका अुपयोग अेकसे ज्यादा लोग करें, यह भी कोअी असाधारण बात नहीं है। बाहर सफरके लिअे जानेवाले लोग अपने मित्रों या पड़ोसियोंको अपना रेलवे पास देते भी देखे जाते हैं।

अपना सामान तोलाये बिना सफर करना, पूरे टिकिटके लायक बालकोंका आधा टिकिट लेना, वगैरा बातोंका भी अिन बुराअियोंमें शुमार हो सकता है। यह रोग भी आम हो गया है।

रेलगाड़ीमें सोडावाटर वगैराके लिअे खास तौर पर अलग रखे हुअे कमरोंमें सफर करके रेलवेकी आमदनी घटानेका अेक तरहका रिवाज हो गया है। अेक नौजवान सोडावाटरवालेको अिस तरहके अपने प्रतिदिनके पराक्रमकी कहानी मुक्त कण्ठसे कहते सुनकर मैं चकित हो गया था।

ये सब बुरे तरीके अीश्वर, देश और रेलवे विभागको धोखा देनेवाले हैं, यह बात कौन किसको समझाये?

रेलमें हमेशा सफर करनेवाला समझदार वर्ग यदि अिस बारेमें थोड़ा जाग्रत रहकर सम्बन्धित लोगोंका ध्यान खींचता रहे, तो ये बुरी बातें कुछ हद तक कम हो जायं और जांचके तरीके ज्यादा सख्त होते ही संभव है रेलवेकी अुचित आयके साधन भी अुत्पन्न हो जायं।

रेलके डिब्बोंमें रहे पंखे, स्विच, नल, कांचकी खिड़कियां, बत्तियां वगैरा भी राष्ट्रकी सम्पत्ति हैं और अुनका दुरुपयोग नहीं किया जाना चाहिये, अिस तरहकी हवा फैलाना भी कोरकसरका अेक अुपाय है। सुना है कि जी० आअी० पी० रेलवेने अपनी सम्पत्ति चुरानेवालेको शरमानेके लिअे दूसरे और पहले दजके डिब्बेकी गद्दियोंके कपड़े पर यह छाप लगवा दी है: "Stolen from the G. I. P."—जी० आअी० पी० से चुराया हुआ। यह चीज अिस रोगकी गहराअीको बताती है।

नियत किये हुअे कामकी अुपेक्षा करके समयकी चोरी करना और अिसके फलस्वरूप आफिसका व्यवस्था-खर्च बढ़ाना यह अेक चिन्ताजनक रोग है। रेलवे स्टेशनों और टिकट-घरों पर अधिकारियों, कर्मचारियों, मजदूरों वगैराको जनताका, रेलवेका और खुद अपना समय अिस तरह बिगाड़ते देखना तीसरे दजके मुसाफिरोंके लिअे आम बात है। "मेरे स्टेशन पर पांच वर्ष पहले लड़ाअीके दिनोंमें जितना काम होता था, अुससे आधा काम अुतने ही स्टाफ, मदद-नीशों और मजदूरोंकी मददसे होता है।" —अैसी गंभीर शिकायत अेक बड़े स्टेशनके अनुभवी अधिकारीने की थी। "गो स्लो"—धीरे काम करो—अिस आन्दोलनके नाम पर चलनेवाली प्रवृत्ति भी खतरनाक चीजोंमें से अेक है।

भगवान करे हमारे देशवासियोंका ध्यान अिस करुण और चिन्ताजनक हकीकतकी तरफ जल्दी जाय।

५-३-'५१ **परीक्षितलाल मजमुदार**

(गुजरातीसे)

वृक्षारोपण और वृक्षमरण

फिरसे वनमहोत्सव मनानेकी बात अखबारोंमें देखनेमें आअी। होली-दीवालीकी तरह क्या यह भी वार्षिक अुत्सव बननेवाला है? क्या अिसकी आवश्यकता है? अिसमें सरकारको पड़ना चाहिये? 'अनाज बोओ' और 'वृक्ष लगाओ' की बातोंके पीछे अितना अनुचित खर्च अुठानेकी क्या आवश्यकता है?

अिस खबरके साथ पिछले वर्षके वृक्षारोपणका अेकन्दर हिसाब भी पढ़नेको मिला। खाद्य-मंत्रीकी अपीलको मानकर पिछले वर्ष तीन करोड़से अूपर वृक्ष रोपे गये थे। राज्योंसे रिपोर्ट मिली है कि अुनमें से लगभग ६० लाख वृक्ष यानी २० फीसदी वृक्ष बचे हैं। ८० फीसदी बालवृक्षोंका मरण क्या बहुत ज्यादा नहीं कहा जायगा?

और अितने वृक्षोंको रोपनेमें खर्च कितना हुआ? सरकारोंने अिस हलचलको हाथमें लिया, अुसमें कितना पैसा खर्च किया? अैसे खर्चोंसे सरकारें क्या बच नहीं सकतीं? मंत्रियोंको अिस ओर भी ध्यान देना चाहिये कि अिस तरहके कामोंको लोग ज्यादातर विज्ञापनबाजी और बेकारका लहरीपन ही मानते हैं।

अहमदाबाद, १५-३-'५१ **म० देसाअी**

(गुजरातीसे)

हमारा नया प्रकाशन

सर्वोदयका सिद्धान्त

कीमत ०-१२-० डाकखर्च ०-२-०

नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद – ९

www.vinoba.in

हरिजनसेवक
२४ मार्च १९५१

हाथ-अुद्योग और यंत्र-अुद्योगोंका मेल – २

न्याय विचार

"हैरिस ट्वीड" और खादीके प्रसंगमें पिछली बार अिस सवाल पर जो चर्चा मैंने शुरू की है, अुसे यहां आगे बढ़ाता हूं।

यंत्रके द्वारा और बड़े पैमाने पर अुत्पादन अिस जमानेकी प्रचलित और मान्य पद्धति है। और आधुनिक सभ्यताके अिस पहलूका अधिकांश देशोंको अितना मोह है, और अुससे वे अैसे चिपट गये हैं कि अब अुसे छोड़ नहीं सकते। लेकिन साथ ही यह याद रखना चाहिये कि अिस पद्धतिके अुत्पादन आदि कार्योंको युद्ध और प्राकृतिक तथा मनुष्यकृत आपत्तियोंसे होनेवाले विनाशका जो खतरा हमेशा अुठाना होगा, वह भी बहुत ही बड़े पैमाने पर होगा। अिस खतरेको टाला नहीं जा सकता। अिसका यह मतलब नहीं है कि पुरानी सभ्यताअें आजकी सभ्यतासे हमेशा ही ज्यादा नैतिक या आध्यात्मिक थीं, या ज्यादा शान्तिप्रिय थीं। लेकिन अुनका जीवनका ढांचा सादा था, साथ ही चूंकि हमारा यह विकसित यंत्र-विज्ञान अुस समय नहीं था, अिस कारण ये आपत्तियां अेक छोटे दायरमें ही सीमित रह जाती थीं। और अिस तबाही और विनाशके बाद पुनर्निर्माणका काम भी तब अितना मुश्किल नहीं होता था। अुस समय पुनर्निर्माण भी स्वावलम्बनके बल पर, तथा सुलभ ढंगसे आजकी अपेक्षा अधिक आसानीसे किया जा सकता था।

आजका मनुष्य आधुनिक सभ्यतामें अितना रंग गया है कि अुसे आधुनिक रहन-सहन छोड़ने और अेक सरल तथा विकेन्द्रीकृत पद्धतिके अनुसार नया जीवनक्रम स्वीकार करनेके लिअे तैयार करना बड़ा मुश्किल है। विकेन्द्रीकृत और छोटे पैमानेके अुत्पादनकी योजना आज यदि कहीं सोची जाती है, तो अुसमें बिजली आदिके द्वारा चालित यंत्रों और नअी वैज्ञानिक रीतियोंका अुपयोग करनेका खयाल रखा जाता है। अिस विकेन्द्रीकरणमें जो शक्ति और जिन छोटे यंत्रों या औजारोंकी आवश्यकता होगी वे सब बड़े-बड़े कारखानोंमें निर्माण किये जावेंगे। और अुनके लिअे जो कच्चा या साधनरूप माल लगेगा, वह हरअेक देशको सुलभ न होगा। यानी यह डर तो बना ही रहेगा कि ये केन्द्रीय कारखाने जब-तब बेकाम और बन्द हो सकते हैं।

अिसलिअे हरअेक देशको चाहिये कि वह अपने राष्ट्रीय हितकी दृष्टिसे भी अुत्पादन और वाहनके पुराने अ-यांत्रिक साधनोंकी रक्षा करे और अुनका चलन जिन्दा रखे। अिस जीवन-व्यवस्थाकी वही कीमत समझनी चाहिये, जो किसी सेनाके लिअे रक्षाके दुय्यम साधनकी होती है। दुय्यम साधनका महत्त्व पहलेसे कम नहीं है। अुसे भी योग्य हालतमें रखना जरूरी होता है, ताकि मौके पर अुसका विस्तार अेकदम किया जा सके और अुससे काम लिया जा सके।

यह तभी हो सकता है, जब सरकारें और विचारशील जनता अिन अुद्योगोंमें लगे हुअे कामगारोंको अुसी निगाहसे देखें, जैसा कि किसी सेनामें जरूरत पड़ते ही मोर्चे पर खड़े करनेके लिअे छावनीमें रहनेवाले सैनिकोंके प्रति देखा जाता है। मोर्चे पर लड़ रहे सैनिकोंकी जैसी फिक्र की जाती है, छावनीके सैनिकोंकी अुससे कम नहीं की जाती। अुन्हें पूरा वेतन और अपनी क्षमता कायम रखनेकी सारी सविधायें दी जाती हैं, और देनी ही चाहियें। अिसी न्यायसे अिन दूसरी पंक्तिके अुत्पादकोंको देखना चाहिये। अुनका मेहनताना अुनके मालका परिमाण और अुसका गुण देखकर ठहराया नहीं जा सकता, अुनके कामका समय देखकर ही तय करना पड़ेगा। मिलका तकुआ अेक दिनमें अेक पौंड सूत कात सकता है, और अेक ही मजदूर अेक साथ चल रहे अैसे कअी तकुओंकी देखरेख कर सकता है। अूपरी तौर पर यह दिखेगा कि मिल-मजदूरने अेक दिनमें कअी पौंड सूत काता है, जबकि हाथ-कताअीके द्वारा हमारे चरखा चलानेवालेने सिर्फ आधा पौंड काता है। लेकिन मिल-मजदूरके अधिक अुत्पादनका कारण अुसका अतिरिक्त कौशल या मेहनत नहीं है। वह तो अुसके नये औजारोंका फल है। हाथ-कताअी और हाथ-कताअी करनेवालोंकी रक्षा राष्ट्रके हितमें जरूरी है, अिसलिअे तथा जिन कठिन परिस्थितियोंमें हाथ-कत्तिनकी जिन्दगी बसर होती है, अुनमें अुसके ठीक निर्वाहके लिअे, हमें मानना चाहिये कि हाथ-कताअीका यह आधा पौंड सूत अुतना ही कीमती है जितना मिल-मजदूरका कअी पौंड। अिसलिअे पूरे कामकी समान घंटोंकी मजदूरी दोनों मजदूरोंको अेक-सी देनी चाहिये।

आखिर अिस तरह जो अुत्पादन होगा, वह बहुत कम होगा। हो सकता है कि जहां मिलमें २०० पौंड सूत काता जाता है, वहां अिस पद्धतिसे १ पौंड या अुससे भी कम हो। तब यदि हाथ-अुत्पादनकी महंगाअी मिल-अुत्पादन पर फैला दी जाय, तो मिल-अुत्पादनकी कीमत कुछ खास नहीं बढ़ेगी, बहुत हुआ तो अेक पौंड पर दो पाअी। बुनाअीके बारेमें भी यही हो सकता है। कीमतमें नगण्यसी बढ़ती होगी, और खरीददार अुसे महसूस भी नहीं करेगा। अिस तरह हाथ-कती और हाथ-बुनी खादी (या मिलके सूतसे हाथ-करघे पर बुना हुआ कपड़ा) मिलके ही कपड़ेकी कीमत पर बेचा जा सकेगा।

सारी चर्चासे हम अिन नतीजों पर आते हैं:–

(अ) प्राकृतिक या मनुष्य-कृत अुत्पातोंके कारण कलकारखानोंका प्रबन्ध अेकाअेक और बड़े पैमाने पर नष्ट हो जानेका धोखा रहता है, अिसलिअे यह जरूरी है कि अुत्पादनके अ-यांत्रिक सरल साधन हमेशा दुरुस्त रखे जायं और अुनका यथासंभव विकास भी किया जाय। सरकारका चाहे जो रूप हो, वह पूंजीवादी हो, समाजवादी हो, या साम्यवादी, अ-यांत्रिक साधनोंकी रक्षा अुसकी हमेशाके लिअे स्वीकृत नीति होना चाहिये, क्योंकि सर्वोदय, अर्थात् सबके कल्याणके लिअे यही नीति अुपयुक्त है।

(अि) शहरके निवासियोंको भी चाहिये कि हरअेक शख्स कोअी अेक हाथ-अुद्योग सीखे और करे। गांवोंमें अैसे अुद्योगोंके विकासको पूरा मौका देना चाहिये; और जो लोग अुन्हें अपना धन्धा बनायें, अुन्हें अुतनी ही पूरी मजदूरी मिलनी चाहिये, जितनी किसी कारखानेके मजदूरको मिलती है। मजदूरी कितनी दी जाय, अिसकी कसौटी अुत्पादनकी मात्रा नहीं हो सकती। आखिर हाथ-अुद्योगमें भी परिश्रम तो अुतना ही लगता है। यंत्र-अुद्योगमें यदि अुत्पादन फिर भी ज्यादा होता है, तो अिसका कारण औजार हैं। बिजलीका करघा बेशक फ्लाय-शटलवाले हाथ-करघेसे ज्यादा बुनेगा, और यह सुधरा हुआ हाथ-करघा, देहातके साधारण हाथ-करघेसे ज्यादा। अिसके सिवा सूतके गुणका भी असर बुनाअीकी रफ्तार पर पड़ेगा। अच्छे सूतकी बुनाअी ज्यादा होगी। लेकिन यदि ये सब मजदूर अीमानदारीसे आठ-आठ घण्टे काम करते हैं, तो अुनकी मजदूरियोंमें फर्क करनेका कोअी अुचित कारण नहीं।

(अु) फिर यह सवाल है कि चीजकी कीमत क्या हो। अिसमें अुत्पादनकी लागतका स्थूल हिसाब हमारी कसौटी नहीं हो सकता। अुत्पादनका तरीका वही हो, तब भी बड़ा कारखाना छोटे कारखानोंको होड़में हमेशा हरा सकता है। कारण, वह अपने अुत्पादनकी लागतमें कअी तरहकी बचत कर सकता है, अुदाहरणके लिअे, वह कच्चा माल खुद पैदा करनेकी व्यवस्था कर सकता है, अपने यंत्र और औजार आदि खुद बना सकता है, माल बेचनेके लिअे अपनी दुकानें खोल सकता है, चीजोंको बांधने, भेजने आदिके प्रासंगिक

www.vinoba.in

खर्चोंमें बचत कर सकता है। अैसी हालतमें, किसी चीजकी कीमत अुसके अुत्पादनकी अिस कम लागतके आधार पर नहीं ठहराअी जा सकती। क्योंकि यह 'कम लागत' देखनेमें ही कम है। वस्तुतः वह महंगी है। अुससे बेकारी, शहरोंमें आबादीका बढ़ना, तथा तरह-तरहके नैतिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सवाल पैदा होते हैं, और ये सवाल राष्ट्रके लिअे महंगे सिद्ध होते हैं।

अगली बार मैं अिस सवालकी चर्चा कपड़ेका अुदाहरण लेकर करूंगा, क्योंकि कपड़ेके अुद्योगका क्षेत्र अिस सिद्धांतके प्रयोगके लिअे सबसे बड़ी बात है।

(अंग्रेजीसे) कि० घ० मशरूवाला

शराबबन्दीका अर्थशास्त्र

सन् १९४७ के पहले भारतकी सारी सरकारोंको आबकारी-महकमेसे कुल ५३ करोड़से अूपर (सन् १९४६-४७ के मिले हुअे आंकड़ोंके आधार पर) आमद होती थी। अिसमें 'देशीराज्यों' को जो आमद अिस महकमेसे होती थी, अुसका हिसाब शामिल नहीं है। वह भी कोअी छोटी-मोटी रकम नहीं होगी। दूसरी तरफ, पाकिस्तानके अलग हो जानेसे अुन हिस्सोंकी आमद भी अूपरकी रकममें से निकल गअी है। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि अिस समय सरकारोंको शराब वगैरा नशीली चीजों पर लगाये हुअे करोंके रूपमें प्रतिवर्ष ५०-६० करोड़ रुपये मिलते होंगे। यह रकम सरकारोंके लिअे छोटी नहीं कही जा सकती। लेकिन अिस व्यसनके पीछे जनता कितना पैसा खर्च करती है, यह अर्थशास्त्रको तो देखना ही चाहिये। तब तो सरकारी आमदकी यह रकम किसी भी गिनतीमें नहीं रहेगी। अिसके अलावा, अुसके कारण जनताके स्वास्थ्य, सामाजिक और कौटुम्बिक सुख तथा दूसरी बातोंको जो अपार हानि पहुंचती है, अुस पर विचार करें तो तुरन्त समझमें आ जायगा कि यह सरकारी आमद कितना अनर्थ करनेवाली है। सच्चा अर्थशास्त्र सरकारके आय-व्ययमें नहीं समाया रहता, बल्कि अिस बातकी जांच करनेमें रहता है कि अिस आय और व्ययसे देशकी प्रजाका कैसा और कितना हित होता है। अितना ही नहीं, खास तौर पर यह देखना चाहिये कि प्रजाके जो पिछड़े हुअे और गरीब वर्ग हैं, जिनके कल्याणमें सर्वोदयकी नीति रही है, अुनका अिससे कितना कल्याण सधता है।

साधारण तौर पर प्रजाके अिस खर्चका अन्दाज आबकारी महकमेकी सरकारी आमदको चार गुनी करके लगाया जाता है। अिसलिअे यह कहा जा सकता है कि सन् १९४६-४७ के बादसे हमारी प्रजा नशेबाजीके पीछे हर साल दो-ढाअी अरब रुपये खर्च करती है। अर्थात् ४० करोड़की आबादी मानें, तो हर व्यक्तिके पीछे सालाना ५-६ रुपयेका खर्च आता है। जिस देशमें पूरा अनाज भी खानेको नहीं मिलता, वहां यह खर्च कैसा माना जायगा, यह बतानेकी जरूरत नहीं है।

लेकिन खास प्रश्न तो दूसरा ही है। यह खर्च ज्यादातर गांवोंके गरीब और पिछड़े हुअे वर्ग करते हैं। अिसलिअे सरकारी आमदका बड़ा हिस्सा अिन पिछड़े हुअे और गरीब लोगों पर बोझके रूपमें पड़ता है। सरकार शराब-ताड़ीके जरिये अिन लोगोंको चूसकर यह आमद करती है। स्वराज्य अिन लोगोंकी अुन्नति और विकास करनेके लिअे है, यह सिद्ध करना हो तो भी सरकारको यह आमद बिलकुल छोड़ देनी चाहिये। और अिन लोगोंको अुसके बोझसे मुक्त कर देना चाहिये। अिसमें शुद्ध मानवधर्म और दरिद्रनारायणकी सेवा भी है। लेकिन अिस दलीलको जाने दें।

शराबबन्दी होनेसे सरकारके खजानेमें गरीबोंके पाससे अिस रकमका आना बन्द हो गया। लेकिन अिस कमीकी पूर्ति सरकारको दूसरे किसी तरीकेसे करनी चाहिये। अिसलिअे यह बोझ दूसरे-तीसरे करोंके रूपमें पैसेवालों और कुछ हद तक खुशहाल लोगों पर पड़ने लगा। आज जो शराबबन्दीके खिलाफ शोरगुल मच रहा है, अुसका बड़ा और छिपा कारण यह है। धनीवर्ग सोचते हैं कि पहले करोड़ों रुपये सरकारको गरीबोंसे मिल जाते थे, अिसलिअे अुतने रुपये हमारे पास बचते थे। लेकिन शराबबन्दी होनेसे सरकारको जो नअी आमदें होने लगीं, अुनका बोझ हम पर पड़ता है। मार्क्स-वाद कहता है कि लोगोंकी बुद्धि असलमें आर्थिक स्वार्थसे प्रेरित होती है। यह कथन यहां भी लागू होता दीखता है। क्योंकि जब शिक्षित-वर्ग अिस सादी और मूल बातको छोड़कर स्वतंत्रता और समानताके नाम पर शराबबन्दीके खिलाफ दलील करते हैं, तब और क्या कहा जाय? शराबबन्दीका सच्चा अर्थशास्त्र यह है: सरकारको क्या मिलता है और क्या नहीं मिलता, अिसका विचार अुसकी आमद परसे या शिक्षित अथवा मालदार वर्गके स्वार्थ परसे नहीं किया जाना चाहिये; बल्कि सबके — यानी गरीब और पिछड़े हुअ लोगोंके — हितकी और अुदयकी दृष्टिसे किया जाना चाहिये। तभी अुसे अर्थशास्त्र कहा जा सकता है। वर्ना तो वह केवल आमद-शास्त्र ही बन जायगा। और तब तो व्यापारी जैसे नफेका ही ध्यान रखता है, वैसा ही सरकारके लिअे भी हो जायगा। अिसलिअे यह अुस कहावतकी तरह हुआ — 'वर मरो या कन्या मरो, पुरोहितका पात्र भरो'। यह अर्थशास्त्र नहीं; राज्यकी नीति नहीं। और अिसमें समानताके आदर्शकी भी रक्षा नहीं होती। अिस पर हम आगे विचार करेंगे।

अहमदाबाद, १९-३-'५१
(गुजरातीसे) मगनभाअी देसाअी

माध्यमकी व्यर्थ चर्चा

विचारदोष

शिक्षणका माध्यम क्या होना चाहिये, अिस बारेमें व्यर्थ ही चर्चा चल रही है। जो अुठा सो अंग्रेजीकी महिमा गाता है। अंग्रेज तो यहांसे गये, लेकिन अुनकी भाषाकी महिमा हम लोगोंके दिमाग पर ठोक-बिठानेका प्रयत्न किया जा रहा है। वह अब कैसे सफल होगा? अंग्रेजी भाषाकी महिमासे किसीको अिनकार नहीं ह, लेकिन शिक्षणका माध्यम क्या होना चाहिये, अिस विषयका अुससे सम्बन्ध क्या? कहते हैं कि शिक्षणका माध्यम बननेकी अभी हमारी भाषाओंकी शक्ति नहीं है। लेकिन अिसमें बड़ा भारी विचार-दोष हो रहा है। वास्तवमें शिक्षणका मुख्य माध्यम भाषा नहीं होती है, कृति होती है। भाषा न जानने पर भी प्यासा मनुष्य अपनी प्यास दूसरेको बता सकता है और दूसरा बिना भाषाके अुसकी प्यासको समझ सकता है। आखिर हमारी भाषाअें असमर्थ मानी जायेंगी तो किस विषयमें मानी जायेंगी? विज्ञानमें! लेकिन विज्ञानके प्रयोग तो करनेसे होते हैं, बोलनेसे नहीं होते। तो फिर मुश्किल कहां आअी? परिभाषाका ही अिन लोगोंने अेक बड़ा हौआ-सा बना लिया है। लेकिन कोअी भी ज्ञान या विज्ञान पारिभाषिक नहीं होता। अनुभव पहले होता है, परिभाषा पीछे बनती है। प्रत्यक्ष कृतिसे अनुभवका साक्षात्कार होता है और प्रत्यक्ष कृतिसे ही वह कराया जा सकता है। कृतिके साथ शब्दोंका भी अुपयोग होता है। तो फिलहाल चन्द रोज पारिभाषिक शब्द अंग्रेजी चलें तो भी कोअी हानि नहीं है। 'हायड्रोजन' के लिअे अुदजन कहना या अुद्रजन कहना या और कुछ कहना, अिसका निर्णय होने तक चाहे हायड्रोजन शब्द चले। लेकिन 'हायड्रोजन' शब्द चला तो अुसके साथ अंग्रेजी भाषा क्यों चलनी चाहिये? हमारी भाषामें भी वह शब्द मजेमें बैठेगा। स्वराज्यमें अगर चन्द रोज मौंटबेटन चल जाता है, तो हमारी भाषामें हायड्रोजन क्यों नहीं चलेगा? जब अुसका अुत्तराधिकारी आयगा तब वह जायगा।

मध्यस्थ दृष्टिका मार्ग

लेकिन मुख्य बात है हमारे मानसिक आलस्यकी। अुसके कारण ही अेक आसान बात भी हमने मुश्किल कर डाली है। अंग्रेजी भाषा अेक भाषाके तौर पर हमारे कुछ लड़के सीखें यह अच्छी बात है। लेकिन अंग्रेजीको माध्यम क्यों रहने देना

www.vinoba.in

चाहिये? भाषाके तौर पर भी सारे लड़के केवल अंग्रेजी सीखें, यह भी खतरनाक है। अुसका अनिवार्य नतीजा यह हुआ कि स्वतंत्र नजरसे हम दुनियाको देख नहीं सकेंगे। अंग्रेजी भाषा हमारी आंखों और दुनियाके दृश्योंके बीच पड़देका काम करेगी। हम चाहें न चाहें, हमारा देश अिंग्लैंड-अमरीकाके पक्षमें घसीटा जायगा। अिसलिअे रशियन, जर्मन, फ्रेंच, चीनी, जपानी फारसी, अरबी आदिका भी हमारा अध्ययन होना चाहिये। तब मध्यस्थ दृष्टि आयगी, नहीं तो हम अेकांगी और परप्रत्ययी बनेंगे।

हमारे राज्य-कारोबारकी सहूलियतके लिअे हमने पंद्रह साल अंग्रेजीको जीवन-दान दिया है। यानी अेक तरहसे हमारे जीवनका ही हमने अुसे दान दिया है। हिन्दी सीखनेका जिनसे नहीं बन सकता है, अैसे वृद्धोंकी अिसमें सहूलियत हुअी है, लेकिन साथ-साथ सहूलियत अंग्रेजों और अमेरिकनोंकी भी हुअी है। हमारे राज्य कारोबारकी बारीकियां पंद्रह साल तक अेक अमेरिकन या अंग्रेज जितनी आसानीसे समझ सकता है, अुतनी आसानीसे अपने देशके निवासी भी नहीं समझ सकेंगे। अिसमें लाभ जो भी देखा गया हो, बात खतरेसे खाली नहीं है।

अग्रगामी व पूर्वगामी बनना है

कुछ लोग तो अुलटे कहते हैं कि राज्य कारोबार अंग्रेजीमें चलेगा तो शिक्षणका माध्यम भी फिलहाल अंग्रेजी ही रहने दो। अगर यही दलील समर्थ ठहरी तो पंद्रहके पचास बन सकते हैं। शिक्षण-शास्त्रका काम है कि वह आगे होकर रास्ता दिखा दे, हो सके तो पंद्रहके पांच बना दे। वही पीछे पीछे चलने लगा तो समग्र देशकी जीवन-व्यवस्था ही पिछड़ जायगी। अिसलिअे पुरुषार्थ-शून्य बहसमें न पड़कर करनेकी चीज कर ही डालनी चाहिये, तो विचार-चक्रको शीघ्र गति मिलेगी और सब सूझेगा।

हमें सोचना ही हमारी भाषामें चाहिये। अगर हम परकीय भाषामें सोचते हैं तो हमारी आत्माका आविर्भाव नहीं होता है। यही देखो न, कि हमारे स्वतंत्र-भारतका हम लोगोंने, महीनों चर्चा करके, अंग्रेजीमें अेक संविधान बनाया है। लेकिन यह संविधान किस खेतकी चिड़िया है, अशिक्षितोंकी बात ही नहीं — बहुत सारे शिक्षित भी नहीं जानते। अगर मूल विचार हमारी भाषामें हुआ होता तो हमारे संविधानकी सूरत ही दूसरी होती और अुसकी हरारत हरेक तक पहुंची होती। आज तो वह किताबमें रह गअी है और अुसके अनुवाद और तरजुमे मूलसे भी क्लिष्ट और दकीक बन गये हैं। दस्तकारीके द्वारा दी जानेवाली बुनियादी तालीमकी पद्धतिका मैंने 'समवाय-पद्धति' नाम रखा है। विज्ञोंने कहा, 'कॉरिलेशनके सारे सहचारी भाव शायद समवायमें नहीं आते।' मैंने कहा, "कॉरिलेशनके लिअे मैंने यह शब्द बताया नहीं है। यह है हमारी पद्धतिका नाम, जिसमें अुद्योग और ज्ञान न भिन्न कहे जा सकते हैं, न अभिन्न कहे जा सकते हैं, बल्कि परस्परमय होते हैं। परस्परमयताको हम अपनी भाषामें 'समवाय' कहते हैं। तो बोले, "'समवाय'के लिअे अंग्रेजी क्या होगा?" मैंने कहा, "न समवायका अंग्रेजी बनाना मेरा काम है न कॉरिलेशनका हिन्दी बनाना। हमारी शिक्षण-पद्धतिको, जो कि हमारे प्रयोगोंमें से निकली है, नाम देना मेरा काम है — और वही मैंने किया है।" अिसी तरह अगर हम अपने संविधानका भी विचार हमारी भाषामें कर सके होते तो जैसे 'समवाय' शब्द नअी तालीमके शिक्षकों और बच्चोंमें चल पड़ा है वैसा ही अुस संविधानके शब्दोंका होता। यानी वे शब्द जीवन-वान् होते। और जो जीवन-वान् होते हैं, वे सहज ही जीवनदायी बनते हैं।

यह विचार-क्रांति कारोबारी लोग नहीं कर सकते हैं। यह शिक्षकों, अध्यापकों और विचारकोंका काम है। अिसलिअे अुन पर अनुगामी नहीं, सहगामी भी नहीं, अग्रगामी और पूर्वगामी बननेकी जिम्मेवारी है।

(दिसम्बर १९५०के 'सर्वोदय' से) **विनोबा**

www.vinoba.in

भारतीय अुद्योग पर कोको-कोलाका असर

आर्थिक नतीजे

भारतमें कोको-कोलाको दाखिल करनेके आर्थिक नतीजे भी अुतने ही बुरे आयेंगे। भारतीय व्यवसायियोंने सोडा-वाटरके अुद्योगमें बहुत बड़ी पूंजी लगाअी है और अुसमें हजारों मजदूर काम करते हैं। बम्बअीमें लगभग अेक करोड़की पूंजी अिसमें लगाअी गअी है और करीब २००० आदमी सोड़ा-वाटर फेक्टरियोंमें लगे हुअे हैं। दिल्लीमें करीब १५० लायसेंसशुदा सोडा-वाटर फेक्टरियां हैं, जो हफ्तेमें करीब १२००० दर्जन बोतलें या हर रोज करीब २००० दर्जन बोतलें तैयार करती हैं। अुनमें काम कर रहे व्यक्तियोंकी संख्या भी बहुत बड़ी है। अिसी प्रकार, भारतके दूसरे भागोंमें भी ये फेक्टरियां चल रही हैं, जिनमें बड़ी संख्यामें मजदूर काम कर रहे हैं।

कोको-कोलाके प्रवेशसे अिस विशाल पूंजीको भारी नुकसान होगा, जिससे देशका आर्थिक संकट और बढ़ जायगा। जब अिन फेक्टरियोंमें लगे हुअे हजारों मजदूर बेकार हो जायंगे, तब अिससे भी बड़ी समस्यायें खड़ी होंगी। अिस बारेमें कुछ आंकड़े मिले हैं, जिनसे मोटे तौर पर यह अन्दाजा लगाया जा सकता है कि अेक बार कोको-कोलाका अुद्योग भारतमें फूलने-फलने लगा कि अिस देशको कैसी विकट समस्याका सामना करना पड़ेगा; और आजकी हालतोंमें वह दिन ज्यादा दूर नहीं दिखाअी देता।

दिल्लीमें कोको-कोलाकी जो नअी फेक्टरी खोली गअी है, वह ८ घण्टेमें ज्यादासे ज्यादा ६००० दर्जन बोतलें तैयार कर सकेगी। पहले पहल अिस पेयने दिल्लीवालोंको आकर्षित नहीं किया, लेकिन जल्दी ही वह बाजार पर अपना अधिकार करने लगा। अिस पेयके शहरमें पहले पहल प्रवेश करनेके कुछ माह बाद अिसकी खपत हर रोज ५०० दर्जन बोतलों तक पहुंच गअी। दिल्लीमें कोको-कोला कंपनीने जो सफलता पाअी, अुससे प्रोत्साहित होकर अब यह अुद्योग सारे पूर्व पंजाबमें फैल रहा है और अम्बालामें कोको-कोलाकी अेक नअी फेक्टरी खुल गअी है। अिसका स्पष्ट अर्थ यह है कि अिस अुद्योगका अिरादा देशके हर कोनेमें धीरे-धीरे घुस जानेका है। बम्बअीमें कोको-कोला फेक्टरीकी रचना वर्लीमें लगभग पूरी होनेको आअी है और आशा है कि जल्दी ही वह पूरे जोरसे अपना काम शरू कर देगी।

भारी नुकसान

दिल्लीमें कोको-कोला फेक्टरीके खुलनेसे गंभीर आर्थिक परिणाम दिखाअी देने लगे हैं। कहा जाता है कि शहरमें सोडा-लेमन वगैराकी खपत ५० फी सदी कम हो गअी है, जिससे अिस अुद्योगके व्यवसायियों और मजदूरोंको भारी नुकसान पहुंचा है। अुनके सामने सर्वनाशका खतरा मुंह बाये खड़ा है। आखिरकार सारे देशकी अर्थव्यवस्था पर अिसका बुरा असर पड़े बिना नहीं रहेगा। दूसरी तरफ, कोको-कोलाका वितरण अैसे ढंगसे किया जाता है कि होटलोंके व्यापारको आम तौर पर अुससे बहुत बड़ा नुकसान पहुंचेगा। अिससे होटलोंमें प्रवाही पदार्थोंकी खपत तो घटेगी ही, साथ ही कोको-कोला कंपनीने यह नीति अख्तियार की है कि जहां तक हो सके होटलोंके जरिये अपना माल न बांटा जाय। कोको-कोला बरफ-पेटियों, पेयको खूब ठण्डा रखनेवाली आलमारियों और अैसी स्वयंचालित मशीनोंमें सड़कों पर बेचा जाता है जिनमें अमुक कीमतके सिक्के डालनेसे पेयकी बोतल बाहर आ जाती है। अिसलिअे होटलोंके मालिक और मजदूर कोको-कोलाके दूसरे शिकार होंगे। भारतमें अिस विदेशी पेयके प्रवेशसे चाय-काफी जैसे पदार्थोंके व्यापारको भी बड़ा नुकसान पहुंचेगा।

पक्षपात

लड़ाओके बादकी अर्थ-व्यवस्था सम्बन्धी कठिनाओयोंके कारण बाहरसे माल मंगानेवाले सारे भारतीय व्यापारियों और व्यवसायियों पर कड़े प्रतिबन्ध लग गये हैं, जिन्हें पिछले कुछ दिनोंमें आयात-लायसेंस पानेमें बेशुमार कठिनाओयोंका सामना करना पड़ा है। लेकिन कोको-कोला कंपनीको ४५ मशीनें मंगानेके लायसेंस दे दिये गये हैं, जिनमें से हर मशीनकी कीमत ५०,००० रुपये हैं। कोको-कोला कंपनीको ५ लाखकी बोतलें मंगानेकी अिजाजत दे दी गओ है, जबकि सोडा-वाटर अद्योगके किसी भी व्यवसायीको बोतलें मंगानेका लायसेंस नहीं दिया गया है। अिस द्वेषपूर्ण भेदभावकी बात छोड़ दें, तो भी यह समझना कठिन है कि जब देशमें अत्यन्त महत्त्वकी चीजोंके लिअे डालरोंकी सख्त जरूरत है, तब अेक अैसे पदार्थके लिअे कोको-कोला कंपनीको किस आधार पर डालर दिये गये, जो स्पष्ट ही हमारे लिअे बिलकुल आवश्यक नहीं है।

शायद अिस सारे मामलेका सबसे अन्यायपूर्ण भाग वह पक्षपात है, जो सोडा-वाटरके देशी अद्योगके खिलाफ अिस विदेशी व्यवसायके लिअे दिखाया गया है। सोडा-वाटरका देशी अुद्योग मशीनों, कांचकी बोतलों, अर्कों और शकरके लिअे लायसेंस पानेमें बड़ीसे बड़ी कठिनाओयोंका अनुभव कर रहा है, जबकि कोको-कोलाको केवल मांगने भरसे ये सब मिल गये हैं। अुदाहरणके लिअे, सारी दिल्लीकी लायसेंसशुदा सोडा-वाटरकी फेक्टरियोंको प्रतिमाह लगभग १६० बोरी शकरकी मिलती है, जबकि दिल्लीकी कोको-कोला कंपनीको डेढ़ महीनेमें ही १७० बोरी शकर मिल चुकी है। बम्बअीकी सारी सोडा-वाटर फेक्टरियोंको प्रति माह केवल १०० बोरी शकर ही दी जाती है।

(अंग्रेजीसे) 'ओक्टोपस'

सातवां अखिल भारतीय बुनियादी तालीम सम्मेलन

[सेवाग्राम, ३ मार्चसे ५ मार्च तक, १९५१]

अिस सम्मेलनने दो दिशाओंमें नये कदम अुठाये। सम्मेलनके अितिहासमें पहली बार, सामान्य सम्मेलनके पहले, तीन दिन तक नअी तालीमके शिक्षकोंका अेक सम्मेलन हुआ। विचारोंके आपसी लेन-देनके सिवा अिसमें अुन्होंने अपनी समस्याओंके हल ढूंढ़नेकी कोशिश की। अिसके बाद प्रायः सारे शिक्षक सामान्य सम्मेलनके लिअे ठहरे रहे। सम्मेलनकी बैठकों पर शिक्षकोंकी अुपस्थितिका अच्छा प्रभाव हुआ। अुनकी हेतुनिष्ठा और कामके वास्तविक अनुभवकी पृष्ठभूमिके कारण बैठकोंमें अुत्साह और कामका वातावरण था।

दूसरी विशेषता कार्यक्रमकी अैसी योजना थी, जिससे नयी तालीमके विशेष पहलुओं पर विभागवार सामूहिक चर्चाके लिअे यथेष्ट अवकाश दिया गया। अैसी चर्चाके लिअे सात विभागीय सभाअें बनाओ गओ थीं। अुनके लिअे अेक दिन सुबहका पूरा और थोड़ा-थोड़ा समय कओ बार दिया गया। अिन सभाओंमें नयी तालीमके निम्नलिखित सवालोंकी आलोचना हुओ:

१. पूर्व बुनियादी तालीम
२. बुनियादी तालीम
३. अुत्तर-बुनियादी तालीम
४. प्रौढ़-शिक्षा और समाज-शिक्षा
५. शिक्षकोंकी तालीम
६. नओ तालीममें पुस्तकोंका स्थान और अुनकी व्यवस्था
७. नओ तालीमका संचालन

शिक्षक-सम्मेलन और ये विभागीय सभायें जिन निश्चयों पर पहुंचीं, अुन्हें सामान्य सम्मेलनमें पेश किया गया और अुनकी नोंध ली गओ। सम्मेलनमें जो काम हुआ, ये निष्कर्ष और निश्चय अुसका महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। अिस प्रयोगकी सफलता पर सबने सन्तोष प्रगट किया, और अैसा आग्रह किया कि भविष्यमें विभागीय चर्चाओंको और ज्यादा समय दिया जाय।

सामान्य सम्मेलनकी बैठक ३ मार्चके सुबह हुओ। स्वागत और परिचयके भाषणोंके बाद मध्यप्रदेशके प्रधान मंत्री श्री रविशंकर शुक्लने प्रारंभिक भाषण दिया, और बिहारके शिक्षा-मंत्री आचार्य बदरीनाथ वर्माने अध्यक्षीय भाषण दिया। शामको श्री विनोबाने सम्मेलनकी प्रदर्शनीका अुद्घाटन करते हुअे अेक अुद्बोधक भाषण दिया। दूसरे दिन सम्मेलनकी अेक पूरी बैठकमें ग्राम-विश्वविद्यालयोंके नये और महत्त्वपूर्ण सवाल पर चर्चा हुओ। अिस चर्चाका आरंभ श्री अविनाशलिंगम चेट्टियरने किया। तीसरे दिन फिर कुछ समय अिसी विषयकी चर्चाको दिया गया। बादका सारा समय नओ तालीमके सरकारी और गैरसरकारी केन्द्रोंसे आओ हुओ रिपोर्टों और अुपर्युक्त विभागीय सभाओंके निर्णयोंको पढ़ने-सुननेके लिअे दिया गया।

श्री विनोबा सम्मेलनमें लगातार हाजिर रहे, और चर्चाओंमें भी अुन्होंने भाग लिया, अिस बातसे प्रतिनिधियोंको बड़ी खुशी हुओ।

४ मार्च, रविवारकी रातको, श्री आशादेवी आर्यनायकम्के मार्गदर्शनमें तालीमी संघके बालकों, विद्यार्थियों और कार्यकर्त्ताओंने भारतीय अितिहासका 'भारतकी कथा' रूपक पेश किया। यह नाटक सबको बहुत पसन्द आया। अुससे यह भी प्रगट हुआ कि नओ तालीममें सांस्कृतिक शिक्षाकी कैसी संभावनाअें हैं। नाटकके बहुतसे दृश्योंमें कओ पुराने विद्यार्थियों, प्रतिनिधियों और मेहमानोंने भी भाग लिया।

पाठकोंको कुछ आंकड़ोंकी जानकारी अुपयोगी सिद्ध होगी। भारतके प्रत्येक प्रान्तके प्रतिनिधि सम्मेलनमें थे, सिर्फ हिमाचल प्रदेशका कोओ प्रतिनिधि नहीं आ सका, क्योंकि वे भाओ अैन मौके पर बीमार हो गये। सेवाग्रामके बाहरसे आये हुअे अिन ६३४ मेहमानोंमें से ३८४ तो सरकारी या गैरसरकारी केन्द्रोंसे आये हुअे अधिकृत प्रतिनिधि थे, ४६ जाती तौर पर आये थे, और २०४ नओ तालीमकी संस्थाओंके विद्यार्थी थे। राज्यवार प्रतिनिधियोंकी संख्या अिस प्रकार थी:—

आसाम	५	मद्रास	७१
बंगाल	४०	मैसूर	१३
बिहार	१४४	नेपाल	२
बम्बअी	१४८	अुड़ीसा	१४
कच्छ	१	पंजाब	३९
दिल्ली	३३	राजस्थान	१
हैदराबाद	१३	सौराष्ट्र	६
जम्मू-काश्मीर	१	त्रावनकोर-कोचीन	७
मध्यभारत	७	अुत्तर-प्रदेश	१७
मध्य-प्रदेश	७२		

(मध्य-प्रदेशके ७२में वर्धाकी रचनात्मक संस्थाओंसे आये हुअे मेहमान भी शामिल हैं।)

५ मार्च १९५१ को प्रतिनिधियोंकी अेक सभामें अखिल भारतीय नओ तालीम शिक्षक-संघकी रचना हुओ। श्री आर्यनायकम् अिस संघके अध्यक्ष, श्री द्वारिकाप्रसाद सिनहा अुपाध्यक्ष, और श्री जोगेश्वरानन्द शर्मा मंत्री चुने गये। अिस संघकी अेक कार्यकारिणी समिति बनानेका भी निश्चय हुआ। अिस बार अिस कामके लिअे अध्यक्षसे प्रार्थना की गओ कि वे विभिन्न राज्योंसे अिस समितिके लिअे सदस्य नियुक्त कर दें। संघके विधानकी रचनाके लिअे अेक छोटी समिति भी बनायी गओ।

(अंग्रेजीसे) मारजोरी साअिक्स

www.vinoba.in

सर्वोदय सम्मेलन, शिवरामपल्ली

आमंत्रितोंको महत्वकी सूचना

सर्वोदय सम्मेलन, शिवरामपल्ली (हैदराबाद) के आमंत्रित सज्जनोंको सम्मेलन-मंत्री श्री गोपबन्धु चौधरी द्वारा प्रमाणपत्र दिये गये हैं, जिनके आधार पर ये कन्सेशनवाली दरों पर रेलवे टिकिट पा सकेंगे। प्रमाणपत्र पानेवालेको अैसे कन्सेशनका अधिकार देनेवाली अेक महत्वपूर्ण शर्त यह है कि वह केन्द्रीय सरकार, किसी राज्यकी सरकार, किसी स्थानीय संस्था या कानून द्वारा स्थापित संगठनके खर्च पर यह यात्रा न करे। यह नियम अभी-अभी जोड़ा गया है। आमंत्रितोंको जो प्रमाणपत्र दिये गये हैं, अुन पर यह शर्त नहीं छपी है। अिससे थोड़ी कठिनाअी पैदा हो गअी है। लेकिन रेलवे-विभागके रैलवे बोर्डके डिप्युटी डायरेक्टर, नअी दिल्ली ने मेहरबानीसे यह सूचित किया है कि अगर आमंत्रित व्यक्ति अपने प्रमाणपत्र पर अपनी सहीसे नीचेकी बात लिख देंगे, तो रेलवे अधिकारी अुसे काफी मानकर कन्सेशन दे देंगे :—

"मैं यह घोषित करता हूं कि मेरी यात्राका खर्च केन्द्रीय सरकार, राज्यकी सरकार, स्थानीय संस्था या किसी कानून द्वारा स्थापित संगठन द्वारा नहीं अुठाया जायगा।"

हरअेक आमंत्रित व्यक्ति, जिसे मंत्रीसे प्रमाणपत्र मिला है, मेहरबानीसे अिस बातका ध्यान रखे और अपने प्रमाणपत्रमें अपनी सहीसे अूपर बताअी घोषणा जोड़ दे।

वर्धा, २०-३-'५१ **वल्लभस्वामी**

(अंग्रेजीसे)

टिप्पणियां

सर्वोदय सम्मेलनमें सीधा लेकर आअिये

पाठक जानते ही हैं कि शिवरामपल्लीमें हो रहे सर्वोदय सम्मेलनमें भाग लेनेके लिअे श्री विनोबा वर्धासे पांव-पांव चलकर जा रहे हैं। अुनकी यह यात्रा वर्धासे ता० ८ मार्चको शुरू हुअी है। सम्मेलनमें अुनकी अुपस्थितिसे अैसी आशा है कि विविध प्रान्तोंसे काफी बड़ी संख्यामें सेवक-जन यहां आयेंगे। अिसके सिवा मध्यप्रदेश और हैदराबाद राज्योंमें से अुनके गुजरनेके कारण गांवोंकी जनता भी संभवतः ज्यादा बड़ी संख्यामें यहां आयेगी। सम्मेलनकी स्वागत-समिति सबकी सुविधाके लिअे भरसक अिन्तजाम कर रही है, और अुसने अिसके लिअे अिस प्रान्तमें नियंत्रित अनाज भी कुछ अिकट्ठा कर लिया है। लेकिन यदि 'सेवकों'की संख्या बहुत बढ़ गअी, तो जरूरी ज्यादा अनाज पानेमें कठिनाअी हो सकती है। अिसलिअे ज्यादा अच्छा यह होगा कि 'सेवक' अपना अनाज अपने साथ खुद ही ले आयें। दूसरे आगन्तुकोंको भी हम सावधान कर देना चाहते हैं कि अुन्हें अपने भोजनकी व्यवस्था खुद ही कर लेनी पड़ेगी।

(अंग्रेजीसे) **सीताराम**
गोपबन्धु चौधरी

अेक दुरुस्ती

ता० १७ फरवरी १९५१ के 'हरिजन' में छपे 'सहकारी आन्दोलनमें व्यवहार-शुद्धि' शीर्षक मेरे लेखमें प्रकाशित हुअे नीचे लिखे मजमून पर राजस्थानके अेक भाअीने आपत्ति की है :

> "स्थानीय कांग्रेसके अेक दलने, जिसने कि यहां अिन दिनों मिलके कपड़ेका काफी कालाबाजार सहकारी समितियोंके द्वारा किया है, अेक नअी सहयोग-समिति खोली है जिसका नाम सर्वोदय सहकारी समिति रखा गया है।"

अिन पंक्तियोंमें लिखा हुआ मजमून सही है या नहीं, अिसका पता लगाना मुश्किल है। यह मजमून अेक संवाददाताने भेजा था। संभव है वह गलत भी हो। वह सही है या गलत, अिसका निर्णय करनेकी जरूरत नहीं दिखती। गलत मान लेना अच्छा है। पाठक अुसे गलत समझें। मेरे मूल लेखका अुद्देश्य तो यही था कि सहकारी आन्दोलनमें व्यवहार-शुद्धि नहीं रहेगी, तो अुससे होनेवाले लाभसे हम वंचित रहेंगे। अिसलिअे हमको अिस विषयमें शुद्धताकी ओर विशेष ध्यान देना चाहिये।

१३-३-'५१ **जाजू**

घूरेकी विद्या

શરાબબન્દીका कानून निःसन्देह गरीब जनताके लिअे आशीर्वाद ही है। बम्बअी और मद्रास, अिन दोनों प्रदेशोंकी सरकारोंने अिस दिशामें काफी बड़े कदम अुठाये हैं। लेकिन पैसेके जालमें जकड़े हुअे हमारे कुछ बड़े नेताओंको लगता है कि अिस सम्बन्धमें अुतावली नहीं करनी चाहिये। कुछ कोविदोंकी विद्याको भी शराबबन्दीमें देशका नुकसान दिखता है! रामकृष्ण परमहंसको अेक बार यह हविस लगी कि मुझे भी कुछ विद्या चाहिये। अुन्होंने कालीमातासे कहा : 'मां, तू अपने अिस लड़केको अैसा बुद्धू मत रख, कुछ विद्या दे।' माता सपनेमें आयी और अुनसे बोली : 'वह देख सामने घूरा, तुझे दिखता है न? वहां भरपूर विद्या पड़ी है। तू मनमानी अुठा ले।' रामकृष्ण बोले : 'मेरी हविस मिट गयी। मुझे वह घूरेकी विद्या नहीं चाहिये, मैं बुद्धू ही भला।'

पवनार, २७-१२-'५० **विनोबा**

(मराठीसे)

स्कूलोंमें झाड़-कपास पैदा की जाय

२३ सितम्बर १९५० के 'हरिजन' में 'कपास-स्वावलम्बन'* नामक जो लेख छपा है, अुसमें बताया गया है कि जो अपने कपड़ोंके लिअे कातना चाहते हैं, अुनके लिअे झाड़-कपास कितना अुपयोगी है। भारतके कुछ राज्योंमें, खासकर बम्बअी राज्यमें बहुतसे प्राथमिक स्कूलोंमें कताअी दाखिल की गअी है। स्कूलवाले बहुतसे स्थानोंमें कपास नहीं मिलती। अुसे बाहरसे मंगाना पड़ता है। कअी बार वह समय पर नहीं मिलती, या जैसी चाहिये वैसी नहीं मिलती। अेक खादी-प्रेमी सुझाते हैं कि जिन स्कूलोंमें कताअी दाखिल की गअी है, अुनमें से हरअेक अपने ही अहातेमें झाड़-कपास पैदा कर ले। यह अेक अमल करने लायक सुझाव है। अिस बातकी सावधानी रखी जाय कि स्थानीय आबहवा और मिट्टीका खयाल रखकर ही कपासका बीज चुना जाय। कपासकी कीमत बहुत अूंची हो गअी है। स्कूलोंके अहातेमें कपास पैदा कर लेनेसे अिस अुद्योगका खर्च कम करनेमें बड़ी मदद मिलेगी।

(अंग्रेजीसे) **जाजू**

* 'हरिजनसेवक' में यह लेख १६ सितम्बरके अंकमें छपा है।

विषय-सूची

		पृष्ठ
गांधीजीके साहित्यका कापीराअिट	जीवणजी देसाअी	२५
स्वरक्षाका अधिकार	कि० घ० मशरूवाला	२५
हिमालयके सबक — ३	मीरा	२६
कुछ चिन्ताजनक बुराअियां	परीक्षितलाल मजमुदार	२७
हाथ-अुद्योग और यंत्र-अुद्योगोंका मेल — २	कि० घ० मशरूवाला	२८
शराबबन्दीका अर्थशास्त्र	मगनभाअी देसाअी	२९
माध्यमकी व्यर्थ चर्चा	विनोबा	२९
भारतीय अुद्योग पर कोको-कोलाका असर	'ओक्टोपस'	३०
सातवां अखिल भारतीय बुनियादी तालीम सम्मेलन	मारजोरी साअिक्स	३१
सर्वोदय सम्मेलन, शिवरामपल्ली	वल्लभस्वामी	३२
टिप्पणियां :		
वृक्षारोपण और वृक्षमरण	म० देसाअी	२७
सर्वोदय सम्मेलनमें सीधा लेकर आअिये	सीताराम गोपबन्धु चौधरी	३२
अेक दुरुस्ती	जाजू	३२
घूरेकी विद्या	विनोबा	३२
स्कूलोंमें झाड़-कपास पैदा की जाय	जाजू	३२

www.vinoba.in